भारत में प्लास्टिक का उत्पादन देखते ही देखते चरम सीमा पर पहुँच गया। इसने पर्यावरण के विनाश में अपनी प्रमुख भूमिका निभाई है। इसके दुष्परिणामों से कोई अपरिचित नहीं है। कुड़े-कचरे के ढेर पर पड़ी प्लास्टिक की थैलियों को खाकर कितने मवेशी मरते हैं। नालियों में पड़ा प्लास्टिक सफाई कर्मियों के लिए समस्या बन रहा है।

मेरी नजर में पर्यावरण की चिन्ता एक बार छोड़ देनी चाहिए। प्रयत्न यह होना चाहिए कि आदमी कैसे बदले? आदमी बदलेगा तो पर्यावरण की समस्या अपने आप हल हो जायेगी। हमारी समस्या है कि जो दिखाई दे रहा है उसे बदलने का प्रयत्न करते हैं, जो अदृश्य है, सामने नहीं है, उसे बदलने का कोई प्रयत्न नहीं होगा। उसे जानबूझ कर गौण कर देते हैं। आज आवश्यक है आदमी की वृति बदले, उसकी चेतना का जागरण हो। जब तक भीतर का परिवर्तन नहीं होता, तब तक बाहर का परिवर्तन नहीं होगा, होगा भी तो वह स्थाई नहीं होगा।

भगवान महावीर ने धर्म को जीवन मे अपनाने वाले के लिए पन्द्रह कर्मादान बतलाए थे। उनमे एक कर्मादान है- वृक्ष की सुरक्षा। वृक्ष काटने को भारी कर्मादान माना गया है। लालच में आदमी अंधा हो जाता है, अन्यथा उसे दिखाई देता कि जंगल काटने से कितने पशु पक्षी और दूसरे जीवों की विराधना होती है। पर्यावरण को सन्तुलित रखने में जीवों का बहुत बड़ा योगदान है। पेड़-पौधे ऑक्सीजन तो देते ही है, धरती के क्षरण और कटाव को भी रोकते हैं, मौसम में कोई व्यतिक्रम नहीं आने देते। वृक्षों को उजाड़कर, आदमी ने अपने लिए कंक्रीट की पक्की इमारते बनवा ली। अपनी सुविधा और फायदे के लिए दूसरे का आश्रय छीनना आदमी की प्रवृत्ति है। यह स्वार्थ की पराकाष्ठा है।

आत्मा की रक्षा करो- यह सूत्र बहुत महत्वपूर्ण है। प्रश्न है आत्मा की रक्षा कैसे हो सकती है? इन्द्रियों की मांग कभी पूरी नहीं होती। उसकी मांग का संयम करो, उस पर अंकुश लगाओं। **संयमः खलु जीवनम्** के पाठ का उच्चारण ही नहीं, इसे हृदयगंम भी करो। जब तक इन्द्रियों का संयम है आत्मा सुरक्षित है। यह संयम नहीं रहा तो आत्मा सुरक्षित नहीं रह सकेगी। असुरक्षित आत्मा सारी दुनिया को असुरक्षित बना देती है।

मन की चंचलता और इन्द्रियों की मांग- इन दोनों की मांग को पूरा करने के लिए आदमी पर्यावरण को विकृत करता है। जब तक यह मांग बनी रहेगी, भविष्यवाणी की जा सकती है कि पर्यावरण का सुधार नहीं हो सकेगा। कितना ही प्रयत्न कर लिया जाए, कितने ही राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय सेमिनार कर लिए जाए, कितने ही बड़े बजट का प्रावधान कर लिया जाए, समाधान नहीं हो सकेगा।

पर्यावरण-रक्षण एक प्रकार से जीने की कला है। जीने की कला का मतलब पर्यावरण की सुरक्षा और पर्यावरण की सुरक्षा का मतलब है आत्मा की सुरक्षा। एक पुरी श्रृंखला बनती है। इस चेन को काट देगें तो सारा सन्तुलन गड़बड़ा जायेगा। इन सब बातों पर ध्यान देकर एक ऐसे वातावरण का निर्माण करें, पर्यावरण की सुरक्षा के प्रति प्रत्येक व्यक्ति को सचेत और प्रेरित करें। मनुष्य जीवन बहुत मूल्यवान है। इसे संयम के साथ जीएं, अपने में आंतरिक परिवर्तन लाएं, चेतना को बदले। ऐसा होने पर ही पर्यावरण सुरक्षित रह सकेगा।

नोट- लेखक तेरापंथ धर्मसंघ के जनसम्पर्क प्रभारी है।